

सामाजिक न्याय के लिए शिक्षक तैयार करना: कर्नाटक का एक अनुभव

मैथिली रामचन्द[1]

शिक्षकों की तैयारी सामाजिक न्याय के लक्ष्य की ओर बढ़ने में एक "गतिशील वाहन" हो सकती है (हैन्सन, 2008)। सामाजिक न्याय दार्शनिक रूप से विवादित और मानदण्ड सम्बन्धी अवधारणा हो सकती है (गुडलैड, 2002)। लेकिन, वहीं राल्स के लिए "न्याय सामाजिक संस्थाओं का पहला गुण होता है" (राल्स, 1971; पृ. 3)। नोवक भी तर्क देते हैं कि सामाजिक न्याय व्यक्तियों के "चिन्तन तथा विचारशील कृत्यों" पर आधारित गुण होता है (ग्रांट एवं अगोस्टो, 2008; पृ. 98 में उद्धृत)।

हमारे जैसे ऊँच–नीच के पदानुक्रमों के आधार पर स्तरों में बँटे हुए समाज में, शिक्षकों की शिक्षा भावी शिक्षकों को भेदभाव के मुद्दों पर समीक्षात्मक रूप से विचार करने और सचेत रूप से समावेशी शिक्षण पद्धतियों को अपनाने का प्रयास करने की प्रक्रिया में संलग्न करने के द्वारा आशा की एक झलक प्रदान करती है। अभी तक भिन्न–भिन्न गुणवत्ता वाले और अलग–अलग वर्गों के बच्चों को शिक्षा देने वाले विविध प्रकार के स्कूलों के माध्यम से होने वाली असंवेदनशील शिक्षण पद्धतियाँ और विचारहीन पाठ्यक्रमों वाली स्कूली पढ़ाई अन्यायों और पक्षपातों को सतत बनाए रखने में एक कारक बनी रही है (कुमार 1989; नाम्बीस्सन एवं राव, 2013)।

बच्चों को निःशुल्क तथा अनिवार्य शिक्षा का अधिनियम, 2009 यह सुनिश्चित करने का एक प्रयास है कि (कम से कम 6 से 14 वर्ष के आयु समूह में) हर बच्चे को 'गुणवत्ता पूर्ण' शिक्षा प्राप्त हो, जिसमें गुणवत्ता के मापदण्डों का स्पष्ट उल्लेख हो। राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005 और उससे सम्बन्धित स्थिति आधारपत्रों ने पाठ्यक्रम के मुद्दों पर होने वाले विमर्श को व्यापक बना दिया है। इससे भी अधिक महत्त्वपूर्ण बात है कि यह विमर्श यह सुनिश्चित करने की जिम्मेदारी शिक्षकों पर डालता है कि उनकी कक्षा का हर बच्चा स्कूली पढ़ाई के अनुभवों को सार्थक रूप से आत्मसात करने में समर्थ हो।[2] शिक्षकों की शिक्षा के लिए राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा (एन.सी.एफ.टी.ई., 2009) इस भूमिका को निभाने के लिए शिक्षकों को तैयार करने हेतु कुछ मार्गदर्शक सुझाव देती है।

कर्नाटक के शिक्षा में डिप्लोमा (डी.एड.) पाठ्यक्रम ने समावेशी शिक्षा को सम्पूर्ण पाठ्यक्रम में व्याप्त एक दर्शन के रूप में प्रस्तुत करने के माध्यम से एन.सी.एफ.टी.ई, 2009 की संकल्पना को स्पष्ट करने का प्रयास किया है। समावेशी शिक्षा की कल्पना सामाजिक न्याय के व्यापक दृष्टिकोण से की गई है। यूनेस्को (2008) के अनुसार, समावेशी शिक्षा स्कूली पढ़ाई की व्यवस्था को हर बच्चे की जरूरतों को पूरा करने के लिए सशक्त बनाने की प्रक्रिया है। बच्चों को स्कूल के अनुरूप ढलने के बजाय, व्यवस्था (शिक्षक जिसका महत्त्वपूर्ण हिस्सा निर्मित करते हैं) को बच्चों की जरूरतें पूरी करने के लिए रूपान्तरित होना जरूरी है।

यह लेख संक्षेप में इसकी रूपरेखा प्रस्तुत करता है कि इस पाठ्यक्रम तथा उससे जुड़ी सामग्री में किन चीजों को शामिल किया गया है। साथ ही यह इस सामग्री का छात्राध्यापकों के एक छोटे समूह के साथ प्रायोगिक परीक्षण करने से प्राप्त हुए अनुभवों को भी साझा करता है।

डी.एड. कार्यक्रम के लिए समावेशी शिक्षा पर पाठ्यक्रम तथा अन्य सामग्री का विकास

"कानून, नीतियाँ तथा नियम एक उदारवादी विचारधारा को साकार करने के लिए निर्मित किए जाते हैं, लेकिन

[1] *I thank Ruma Banerjee for convincing me to get involved in inclusive education and for sustained partnership in the work related to this area.*

[2] *For the historically underprivileged, schooling not only provides meaningless experiences but also actively perpetuates feelings of poor self esteem and hegemonic values. This has been well documented. (See for example: Krishna Kumar's (1989) observation of a tribal boy's experience in a social studies class or Murali Krishna's 'Pedagogic Practice and the Violence Against Dalits in Schooling' in Sleeter et al, 2012). Also, for children with disabilities, the experience has been segregation even where 'integration' was attempted (Saxena, 2012).*

उन्हें ऐसी संस्कृति में रोपा और बढ़ने के लिए छोड़ दिया जाता है जो उस समतावादी आचरण के प्रतिकूल होती है जिसको वे आधार मानते हैं" (जुनेजा, 2011; पृ.165)। इसलिए चुनौती एन.सी.एफ.टी.ई. 2009 सहित हाल ही में बनाए गए कानूनों तथा नीतियों की समतावादी आकांक्षाओं को जमीनी वास्तविकता में परिवर्तित करने की थी।

पाठ्यक्रम की तैयारी एक परामर्श पर आधारित प्रक्रिया थी।[3] उससे एक आम सहमति निकलकर आई कि जहाँ समावेशी शिक्षा के दृष्टिकोण को पूरे पाठ्यक्रम में व्याप्त होना चाहिए, वहीं छात्राध्यापकों को उसकी एक अवधारणात्मक समझ भी जरूर हासिल करना चाहिए। इसी जरूरत को देखते हुए, समावेशी शिक्षा को एक इकाई के रूप में शिक्षा के अध्ययन के पाठ्यक्रम में शामिल किया गया है। यह इकाई समावेशी शिक्षा के अवधारणात्मक आधारों को स्पष्ट करती है; समावेश की राह में आने वाले अवरोधों की पहचान करके उनसे पार पाने के तरीकों और साधनों को प्रस्तुत करती है; विविधता को एक संसाधन के रूप में सराहती है; और सीखने के समावेशी परिवेशों को निर्मित करने के लिए मार्गदर्शक सुझाव देती है।

जिस कार्यदल ने पाठ्यक्रम का मसौदा तैयार किया, वह शिक्षकों को शिक्षा देने वालों के लिए एक सहयोगी पुस्तिका तथा छात्राध्यापकों के लिए पढ़ने की सामग्री तैयार करने के काम में भी शामिल था।

छात्राध्यापकों के लिए पढ़ने की सामग्री तैयार करते समय निम्नलिखित मार्गदर्शक बिन्दुओं को ध्यान में रखा गया (नवानी, 2010; पृ.158) :

- पाठ्यक्रम की शैक्षणिक आवश्यकताओं को पूरा करना
- छात्राध्यापकों की विकासात्मक जरूरतों का समाधान करना
- उनके सामाजिक, सांस्कृतिक सन्दर्भों को ध्यान में रखना
- सीखने के सन्दर्भ की माँगों की पूर्ति करना

समावेशी शिक्षा पर उपलब्ध साहित्य विशाल और विविध प्रकार का है। उसे ऐसे रूप में प्रस्तुत करना, जो छात्राध्यापकों के लिए समझने में सुगम हो तथा उसकी विषयवस्तु को उनकी सामाजिक, सांस्कृतिक पृष्ठभूमि के सन्दर्भ से जोड़ना एक चुनौतीपूर्ण कार्य था (मैथिली, 2011)। बाहरी विशेषज्ञों से परामर्श करने तथा आन्तरिक बैठकों के दौर में मसौदे की सामग्री की कई पुनरावृत्तियों के बाद उसे तैयार किया गया। पाठ्यसामग्री तैयार करने की कार्यप्रणाली मुख्य रूप से विचार करने के लिए विभिन्न प्रकार के प्रश्न उठाते हुए शैली को बातचीत के जैसी रखने की और मुद्दों तथा विचारों को छोटे–छोटे वृतान्तों, चित्रों, समाचारपत्रों के लेखों तथा संक्षिप्त जीवनियों के द्वारा स्पष्ट करने की थी।

कुछ चुने हुए छात्राध्यापकों के साथ पढ़ने की सामग्री का प्रायोगिक परीक्षण[4]

अगला चरण मसौदे की सामग्री को बेंगलूरु के तीन डी. एड. कालेजों में बीस छात्राध्यापकों के साथ आजमाकर देखने का था।

उनके साथ काम करने का तरीका प्रमुख रूप से संवाद का था। पढ़ने की सामग्री को पुस्तकों से लिए गए अन्य प्रासंगिक लेखों, अध्यायों तथा फिल्मों के अंशों से संवर्धित किया गया था। उनके साथ के सत्रों में विस्तृत चर्चाएँ शामिल रहती थीं, जो या तो छोटे–छोटे समूहों में या फिर पूरी कक्षा के रूप में की जाती थीं। छात्राध्यापकों को करने के लिए लिखित कार्य भी दिए गए थे, जो उत्तरों की दृष्टि से खुली प्रश्नावलियों, सन्दर्भ से जुड़े प्रश्नों के उत्तरों तथा निबन्धों के रूप में होते थे।

इन चर्चाओं तथा लिखित कार्यों ने उनकी धारणाओं और दृष्टियों में झाँकने की एक खिड़की प्रदान की। उदाहरण के लिए, बच्चों की बुद्धि (जो परीक्षाओं में उनके हासिल किए गए अंकों के नजरिए से आँकी जाती है) के आधार पर उन पर 'बुद्धिमान' या 'बुद्धिहीन' होने का ठप्पा लगाने के बारे में उनकी धारणाओं की जड़ें काफी गहरी प्रतीत हुईं, जबकि जाति के बारे में उनके दृष्टिकोण विविध प्रकार के थे – उसके सामाजिक, ऐतिहासिक कारकों की भेदपूर्ण बारीक समझ से लेकर, इस तरह की मजबूत धारणाओं तक कि दलित बच्चे कम बुद्धिमान या स्कूल में अनियमित आदि होते हैं। इसके साथ ही, उनमें सामाजिक ऊँच–नीच के पदानुक्रम की व्यापक स्वीकार्यता भी प्रतीत हुई। हमने उसे "देखने की सम्भावनाओं की खोजबीन करने" का निर्णय लिया "जो परिचित होने के कारण नजर से ओझल

[3] *The Position Paper on Inclusive Education (Banerjee et al, 2013) provided the basis for the consultations.*

[4] *This activity was taken up as part of a collaborative project with DSERT and financial grant from UNICEF.*

रहता है, क्योंकि वह रोजमर्रा की जिन्दगी का इतना ज्यादा हिस्सा होता है कि वह पूरी तरह ध्यान से चूक जाता है", जैसा कि मैक्सिन ग्रीन का कथन है। खोजबीन के इन प्रयासों की रूपरेखा सामाजिक न्याय के लिए ग्रांट एवं अगस्टो (2008) के द्वारा सुझाई गई शिक्षकों की इन क्षमताओं के आधार पर बनाई गई थी:

1. पूछताछ पर आधारित समीक्षात्मक शिक्षण पद्धति के लिए प्रतिबद्धता
2. व्यावहारिक अभ्यास तथा सहयोग के समुदाय निर्मित करना
3. चिन्तनशील आचरण में संलग्न रहना
4. समीक्षात्मक सामाजिक चेतना विकसित करना

इन क्षमताओं को विकसित होने के लिए समय और सतत प्रयासों की आवश्यकता होती है। छात्राध्यापकों के साथ 30 घण्टे काम करने में, हम उन्हें पूछताछ पर आधारित समीक्षात्मक शिक्षण पद्धति का संक्षिप्त अनुभव प्रदान कर सके व चिन्तनशील आचरण में संलग्न रहने के लिए सुझाव दे सके। हमने अभ्यास के समुदाय निर्मित करने तथा समीक्षात्मक सामाजिक चेतना विकसित करने के महत्त्व को रेखांकित किया।[5] इस प्रयास को शिक्षकों की शिक्षा के कार्यक्रम में फैलाने की जरूरत है, जिसमें शिक्षकों को शिक्षा देने वाले उनको स्पष्ट तथा सुसंगत सन्देश दें। इसके अतिरिक्त, यदि सामाजिक न्याय के विचारों तथा सिद्धान्तों को आचरण में उतारा जाना है तो उसके लिए नए भर्ती हुए शिक्षकों को प्रारम्भिक व्यक्तिगत सहायता तथा मार्गदर्शन के सहयोग की आवश्यकता रहती है।[6] साथ ही, शिक्षकों को शिक्षा देने वालों को उस बेचैनी के प्रति संवेदनशील बनाया जाना पड़ता है जिसका सामना छात्राध्यापक तब करते हैं जब वे अपने बारे में खुद के ज्ञान की और दूसरों व संसार के साथ अपने सम्बन्ध की जाँच–पड़ताल करते हैं (कुमाशिरो, 2008)। सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण बात यह है कि शिक्षकों को शिक्षा देने वालों को सचेतन रूप से उन क्षमताओं को स्वयं विकसित करने की जरूरत होती है जिनको वे अपने छात्राध्यापकों में देखने की आकांक्षा रखते हैं।

हालाँकि शिक्षकों की क्षमता को निर्मित किया जाना और "मुक्तिदायी शिक्षण" की उनकी संकल्पना को निर्मित किया जाना आवश्यक है (हैमरनैस इत्यादि, 2005), परन्तु, जैसी कि पूनम बत्रा (2014) चेतावनी देती हैं, शिक्षकों को "सुधार के लक्ष्य" नहीं बना दिया जाना चाहिए। शिक्षक व्यवस्था का हिस्सा हैं और जहाँ एक ओर शिक्षकों को सशक्त बनाने में उनकी शिक्षा को महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाना जरूरी है, वहीं दूसरी ओर नीतियों तथा कानूनों को ऐसे संस्थानिक ढाँचों को सुनिश्चित करना होगा जो शिक्षकों की स्वायत्तता को कमजोर नहीं करते। साथ ही अमन मदान (2013) सुझाते हैं कि स्कूली पढ़ाई तथा स्कूल के ढाँचे का सम्बन्ध जटिल होता है और उसके "सूक्ष्म भेदों को स्पष्ट करने वाली समझ" होना आवश्यक है (पृ. 138)। हमारे देश में सामाजिक न्याय तथा शिक्षकों की शिक्षा पर किए जाने वाले कार्य के द्वारा ऐसी समझ को बढ़ावा देना बेहद जरूरी है।

"शिक्षा न केवल देखने की क्षमता की स्वतंत्रता से जुड़ी है, बल्कि बदलने की, समझने की और फिर से आविष्कार करने की, संसार को जानने और उसे रूपान्तरित करने की स्वतंत्रता से भी जुड़ी है" (एयर्स 2004, पृ. 21)। यदि स्कूली पढ़ाई को ऐसी शिक्षा को सुनिश्चित करना है, तो उसके लिए व्यक्तियों तथा संस्थानों, दोनों को अपने को उसके लिए "अनुकूल बनाने वाली विशेषज्ञता" विकसित करने की जरूरत है।

[5] *We found that while the reading material was adequate in developing some perspectives related to discriminations; clarifying a few concepts, such as intelligence; and appreciate the need to develop an inclusive learning environment, some of the vignettes and activities suggested seemed to reinforce their existing beliefs and prejudices. We are in the process of revisiting these sections. Also, in her review of our material, Jane Sahi has pointed out that social justice issues should not be super imposed from an external perspective. The engagement with student teachers has given us insights to communicate the issues more organically, emerging for the student teachers' concerns and beliefs.*

[6] *A study we took up as part of the UNICEF funded project, shows deeply entrenched beliefs on inclusion among teachers of both Government and Private schools. Even if we assume a robust teacher preparation programme that can develop teacher capacities for social justice, newly appointed teachers would need strong convictions and enormous confidence, to translate these into practice, in existing schools. This is where a more proactive role by teacher education institutes would be crucial in helping build communities of practice among alumni and much needed mentoring support.*

References

- Ayers, W. 2004. Teaching the Personal and the Political Essays on Hope and Justice. Teachers' College Press, New York
- Banerjee et al, 2012. Position Paper on Inclusive Education. Unpublished document.
- Batra, P. 2014. Problematising teacher education practice in India: Developing a research agenda. Education as change. 18(1); 55-5/8
- Grant, C & Agosto, V. 2008. Teacher Capacity and Social Justice in Teacher Education. In Cochran-Smith, Feiman-Nemser & Mc Intyre (Eds). Handbook of Research on Teacher Education. Routledge, New York.
- Hammerness, K et al. 2005. How teachers learn and develop. In Darling-Hammond, L & Bransford, J (Eds). Preparing Teachers for a changing world: What Teachers should Learn and Be Able to Do. Jossey.Bass, San Franscisco
- Kumar, K. 1989. The Social Character of Learning. Sage Publications, New Delhi
- Kumashiro, K. 2008. Partial movement towards teacher quality and their potential for advancing social justice. In Cochran-Smith, Feiman-Nemser & Mc Intyre (Eds). Handbook of Research on Teacher Education. Routledge, New York.
- Madan,A. 2013. Does education really change Society? In Nambissan & Rao (Eds). Sociology of Education in India. Changing Contours and Emerging Concerns. Oxford University Press, New Delhi
- Mythili, R, 2011. Status Study of D.Ed colleges in Karnataka. Karnataka Jnana Aayoga, Bangalore
- National Council for Educational Research and Training (NCERT), 2005. National Curriculum Framework. NCERT, New Delhi
- National Council for Teacher Education (NCTE), 2009. National Curriculum Framework for Teacher Education, NCTE, New Delhi
- Nawani, D. 2010. School Textbooks: understanding frameworks for analysis. Contemporary Education Dialogue. 7(2). pp. 157-192
- Rawls, J. 1971. A Theory of Justice. Harvard University Press, Cambridge
- Saxena,V (Ed). (2012) Contemporary Trends in Education – a handbook for educators, Dorling Kindersley (India) Pvt. Ltd., Noida
- Sleeter et al. (Eds) 2012. School Education, Pluralism and Marginality. Orient Blackswan, Hyderabad.
- UNESCO, 2008. The Diversity Kit. Retreived from www.unesco.org
- Yogendra Singh (Ed) Schooling, Stratification and Inclusion. NCERT, New Delhi

---

मैथिली रामचन्द विज्ञान शिक्षा में डाक्टरेट की उपाधि प्राप्त हैं और वे वर्तमान में आर.वी. एजुकेशनल कन्सोर्टियम (आर.वी.ई. सी.), बेंगलूरु की डायरेक्टर हैं। आर.वी.ई.सी. के काम का प्रमुख केन्द्र प्रारम्भिक स्कूलों के शिक्षकों की शिक्षा के क्षेत्र में शोध करना है। मैथिली आजकल कर्नाटक राज्य में शिक्षा में द्वि–वर्षीय डिप्लोमा कार्यक्रम के लिए संसाधनों और सामग्री तैयार करने के कार्य में संलग्न हैं। वे इसके पहले डी.एड. पाठ्यक्रम के पुनरीक्षण कार्य में भाग ले चुकी हैं। उनकी अन्य रुचियाँ समावेशी शिक्षा तथा शिक्षा के दर्शन से सम्बन्धित हैं। उनसे rvecbangalore@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है।
अनुवाद: भरत त्रिपाठी